सोनचिरई

(एक सोहर सुनने के बाद)

बहुत पुरानी कथा है
एक भरे पुरे घर में
एक लड़की थी सोनचिरई

वह हँसती थी
तो धूप होती थी
फूल खिलते थे

वह चलती थी
तो वसन्ती हवा चलती थी

जिधर निकल जाए
लोगों की पलकें बिछ जाती थी

और जैसाकि हर किस्से में होता है
उसका विवाह भी एक राजकुमार से हुआ

राजकुमार उस पर जान लुटाता था
उसके होंठ उसकी तारीफ में खुलते
उसकी जिह्वा उसके प्रेम के सिवा
और सारे स्वाद भूल गई थी

उसकी आँखों में नींद
और दिल में करार न था

और ऐसे ही दो-चार वर्ष बीत गए
सोनचिरई की गोद न भरी
ननद को भजीता
सास को कुल का दिया
पति को पुरुषत्व का पुरस्कार न मिला

ननद कहने लगी बज्रवासिन
सास कहने लगी बाँझ

और जो रात-दिन समाया रहा उसमें साँसों की तरह
उसने कहा तुम्हारी स्वर्ण देह किस काम की
अच्छा हो तुम यह गृह छोड़ दो
तुम्हारी परछाँई ठीक नहीं होगी हमारे कुल के लिए

सोनचिरई बहुत रोई
मिन्नतें की
पर किसी ने न सुनीं

आँसुओं बीच एक स्त्री
घर के बाद
भटकने लगी ब्रह्माण्ड में

उसे जंगल मिला
जंगल में बाघिनी मिली
उसने उसे अपना दुःख सुनाया
और निवेदन किया कि वह उसे खा ले

बाघिनी ने कहा वहीं लौट जाओ जहाँ से आई हो
मैं तुझे न खाऊंगी
वरना मैं भी बाँझ हो जाऊँगी

सोनचिरई क्या करती!

वहाँ से साँप की बांबी के पास पहुँची
बांबी से नागिन निकली
नागिन ने उसका दुःख सुना
फिर कहा वहीं लौट जाओ जहाँ से आई हो
जो मैं तुझे काट खाऊँगी
तो बाँझ हो जाऊँगी

सोनचिरई बहुत उदास हुई
फिर क्या करती!
गिरते-पड़ते माँ के दरवाजे पहुँची

माँ ने धधाकर हालचाल पूछा
कौन सी विपत्ति में दुलारी बिटिया ऐसे आई है

बेटी ने अपना दुःख सुनाया
और चिरौरी की कि थोड़ी सी जगह दे दो माँ रहने के लिए
माँ ने कहा विवाह के बाद बेटी को
नैहर में नहीं रहना चाहिए
लोग-बाग क्या कहेंगे
वहीं लौट जाओ जहाँ से आई हो

और सुनो बुरा न मानना बेटी
जो तुम्हारी परछाँई पड़ेगी
तो मेरी बहू बाँझ हो जाएगी

यह कहकर माँ ने अपना दरवाजा बन्द कर लिया
अब सोनचिरई क्या करती!

उसने धरती से निवेदन किया
अब तुम्ही शरण दो माँ
दुःख सहा नहीं जाता
इन कदमों से चला नहीं जाता
जो लोग पलकों पर लिए चलते थे मुझे
उनके ओसारे में भी जगह न बची मेरे लिए
अब कहाँ जाऊँ तुम्हारी गोद के सिवा

धरती ने कहा तुम्हारा दुःख बड़ा है
लेकिन मैं क्या करूँ
जहाँ से आई हो वहीं लौट जाओ

जो मैं तुमको अपनी गोद में रख लूँगी
तो ऊसर हो जाऊँगी

और मित्रों इसके आगे जो हुआ
वह किसी किस्से में नहीं है

हुआ यह कि सब ओर से निराश
सोनचिरई बैठ गई एक नदी के किनारे

एक दिन गुजरा
दो दिन गुजरा
तीसरे दिन तीसरे पहर एक सजीला युवक

प्यास से बेहाल नदी तट पर आ मिला

उसने सोनचिरई को देखा
सोनचिरई को देख
पलभर के लिए वह सब कुछ भूल गया

उसने विह्वल हो नरम स्वर में
सोनचिरई से दुःख का कारण पूछा
और सब कुछ जान लेने पर
अपने साथ चलने का निवेदन किया

सोनचिरई पल-छिन हिचकी
फिर उसके साथ-साथ हो ली

फिर उसके साथ पूरी उम्र जीकर
जब वह मरी
तो आँसुओं से जार-जार उसके आठ बेटों ने
उसकी अर्थी को कन्धा दिया

सोनचिरई आठ बेटों की माँ थी
वह स्त्री थी
और स्त्रियाँ कभी बाँझ नहीं होतीं

वे रचती हैं!
वे रचती हैं तभी हम-आप होते हैं
तभी दुनिया होती है
रचने का साहस पुरूष में नहीं होता

वे होती हैं तभी पुरूष
पुरूष होते हैं।"